श्रीभँवरलाल नाहटा

एक जैनेतर संत कृत जम्बूचरित्र

भारत में अनेक धर्म-सम्प्रदाय हैं और विचारभेद के कारण ऐसा होना अनिवार्य भी है. पर इसका एक दुष्परिणाम हुआ कि हमारी दृष्टि बहुत ही संकुचित हो गई. एक दूसरे की अच्छी बातें ग्रहण करना तो दूर की बात पर सांप्रदायिक विद्वेष-भावना के कारण दूसरे संप्रदायों के दोष ढूढना और उन्हें प्रचारित करना ही अपने संप्रदाय के महत्त्व बढाने का आवश्यक अंग मान लिया गया है. पुराणों आदि में जैन धर्म सम्बन्धी जो विवरण मिलते हैं उनसे यह भली-भांति स्पष्ट है कि जैनधर्म हजारों वर्षों से भारत में प्रचारित होने पर भी और उसके प्रचारक व अनुयायी अनेक विशिष्ट व्यक्ति हुए उन तीर्थंकरों, आचार्यों व जैनधर्म के महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों का उल्लेख तक पुराणादि ग्रंथों में नहीं किया गया. इतना ही नहीं, महत्त्व के सिद्धान्तों को भी गलत रूप में बतलाया गया.

मध्यकाल में अनेक संत और भक्त सम्प्रदायों का उद्भव हुआ और उन्होंने भक्ति वैराग्य और अध्यात्म का प्रचार करने के साथ-साथ समाज के अनेक दोषों का निराकरण करने का भी कदम उठाया. कबीर आदि ऐसे ही संत थे जिनका प्रभाव परवर्त्ती अनेक धर्म-संप्रदायों पर दिखाई पड़ता है. वैसे वे काफी उदार रहे हैं और जैनधर्म के कई अहिंसादि-सिद्धान्तों को अच्छे रूप में अपनाया भी, पर वे भी सांप्रदायिक दृष्टि से ऊपर नहीं उठ सके अतः जैनधर्म के सम्बन्ध में उनके विचार जो भी थोड़े बहुत व्यक्त हुए वे कटाक्ष व हीन भाव के सूचक हैं. रज्जब आदि कई संत कवियों ने जैन जंजाल आदि रचनाएं की हैं, उनसे यह स्पष्ट है.

राजस्थान में निरंजनी, दादूपंथी, रामस्नेही, आदि संत संप्रदायों का गत तीन चार सौ वर्षों में अच्छा प्रभाव रहा है और जैनधर्म का भी इसी समय वहां काफी प्रभाव था. दिगम्बर व श्वेताम्बर दोनों सम्प्रदाय अच्छे रूप में प्रचारित रहे. कई जैनों का उन संत-संप्रदायों के संतों आदि से परिचय व सम्बन्ध भी रहा है. फिर भी जैसा पारस्परिक सद्भाव रहना चाहिए था, नहीं रहा. इसका प्रमुख कारण सांप्रदायिक मनोवृत्ति ही है. जैनकथाएं कई बहुत प्रसिद्ध रही हैं और उन्होंने जैनेतर संतों को भी आकर्षित किया है. इनमें से एक कथा जम्बू स्वामी की है. शील की महिमा प्रचारित करने के लिए उस कथा को दादूपंथी संत "तुरसी" ने 'जम्बूसर प्रसंग' के नाम से हिन्दी में पद्यबद्ध किया है. प्रस्तुत काव्य की कई हस्तलिखित प्रतियां मेरे अवलोकन में आई, उनमें से एक प्रति की प्रतिलिपि तो जयपुर के उदारमना संत मंगलदास जी ने अपने हाथ से करके मुझे कुछ वर्ष पूर्व भेजी थी. उसके बाद दो और प्रतियां भी जम्बूसर प्रसंग की मिलीं. उन तीनों प्रतियों के आधार से संपादित करके यहाँ प्रकाशित किया जा रहा है.

अंतिम केवली जम्बू स्वामी की कथा जैन समाज में बहुत प्रसिद्ध है. उनके संबंध में संस्कृत, प्राकृत, राजस्थानी, गुजराती में अनेकों गद्य-पद्यमय रचनाएं प्राप्त हैं. जहाँ तक मेरी जानकारी है, उनके चरित्र के सम्बन्ध में सबसे प्राचीन और उपकथाओं के साथ वर्णन वसुदेव हिण्डी के प्रारम्भ में मिलता है, जो पांचवीं शताब्दी की रचना है. तदनन्तर आचार्य श्री हेमचन्द्रसूरि ने परिशिष्ट पर्व में जम्बू चरित्र विस्तार से लिखा है और उसके बाद तो लगभग २०-२५ रचनाएं दिगम्बर, श्वेताम्बर दोनों संप्रदायों में लिखी गईं जिनमें से कुछ प्रकाशित भी हो चुकी हैं. महापुरुष जम्बू

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भगवान् महावीर के पंचम गणधर सुधर्मा स्वामी के शिष्य थे, राजगृह नगर के श्रेष्ठी ऋषभदत्त की पत्नी धारिणी की कुक्षि से उनका जन्म हुआ. १६ वर्ष तक घर में रहे, फिर सुधर्मा स्वामी की देशना सुन कर वैराग्यवासित हुए और दीक्षा लेने का विचार किया. एक समृद्धिशाली सेठ के घर में जन्म लेने से, दीक्षा से पहले ही अन्य धनी सेठों की ८ कन्याओं से उनका वैवाहिक सम्बन्ध निश्चित हो चुका था. माता आदि कुटुम्बियों ने विचार किया कि किसी प्रकार उनका विवाह कर दिया जाय तो वे सांसारिक विषयों में मग्न हो जायेंगे. पर जम्बूकुमार का वैराग्य दृढ था, इसलिए उन्होंने कुटुम्बी जनों के अनुरोध से उन आठों कन्याओं से विवाह तो कर लिया पर विवाह से पूर्व उन्होंने उन कन्याओं के पिताओं को स्पष्ट सूचित कर दिया कि मैं दीक्षित होने वाला हूं. विवाह की प्रथम रात्रि में ही उन्होंने अपनी आठों स्त्रियों को प्रतिबोध देकर सहयोगी बना लिया और साथ ही विवाह में जो ९६ करोड़ का धन आया था उसे चुराने के लिए ५०० चोरों के साथ आए हुए प्रभव चोर को भी उनके उपदेश ने प्रभावित किया. इस तरह माता, पिता, स्त्रियों, सास-ससुरों व प्रभवादि ५०० चोरों के साथ उन्होंने सुधर्मा स्वामी से दीक्षा ग्रहण की. वही राजपुत्र प्रभव आगे चल कर उनका प्रधान पट्टशिष्य बना. २० वर्ष तक जम्बू स्वामी छद्मस्थ अवस्था में रहे. तदनन्तर केवलज्ञान उत्पन्न हुआ और ४४ वर्षों तक केवली अवस्था में विचरे. भगवान् महावीर के निर्वाण के ६४ वर्ष बाद ८० वर्ष की आयु में वे मोक्ष सिधारे. इनके बाद इस भरतक्षेत्र से पंचम काल में कोई मोक्ष नहीं गया. इससे वे अन्तिम केवली कहलाये. वास्तव में वर्त्तमान जैन आगमों के निर्माण में जम्बू स्वामी का प्रधान हाथ रहा है. भगवान् महावीर ने तीर्थंकर के रूप में ३० वर्ष तक जो भी उपदेश दिया उसे १२ अंगसूत्रों में ग्रथित करने का काम गणधरों ने किया. महावीर निर्वाण के दिन ही गौतम स्वामी को केवल ज्ञान हो गया. यद्यपि वे इसके बाद १२ वर्ष तक और रहे पर संघ के संचालन का भार सुधर्मास्वामी ने ही संभाला और उन्होंने ही जम्बू स्वामी को संबोधित करते हुए वर्त्तमान आगमों की रचना की. फलतः उन आगमों के प्रारम्भ में सुधर्मा स्वामी के मुख से यह कहलाया गया है कि हे जम्बू ! इस आगम की वाणी भगवान् महावीर से जिस रूप में सुनी, तुमें कहता हूँ ! जम्बू स्वामी का निर्वाण मथुरा में हुआ और उनके ५०० से अधिक स्तूप सम्राट् अकबर के समय तक मथुरा में विद्यमान थे. उनके जीर्णोद्धार का वर्णन दिगम्बर विद्वान् कवि राजमल्ल ने अपने संस्कृत जम्बूचरित्र में किया है.

प्रस्तुत संत कवि तुलसी रचित जम्बूसर प्रसंग में जैनधर्म, सुधर्मा स्वामी, उनसे दीक्षा लेने आदि का उल्लेख नहीं किया है. प्रारम्भिक विवाह के अनन्तर स्त्रियों से वार्त्तालाप और चोर का आगमन, सबको प्रतिबोध तथा ब्रह्मचर्य में जम्बू स्वामी के दृढ रहने का वर्णन ही कवि ने किया है. कई दृष्टान्तों का तो नाम निर्देश मात्र किया है पर अठारह नातों वाला सम्बन्ध कुछ विस्तार से दिया है, जो वसुदेव हिण्डी में ही सबसे पहले मिलता है. संत कवि तुलसी ने किसी मौखिक कथा को सुन कर ही अपने ढंग से इस कथा की रचना की है. जम्बू के नाम की जगह कवि ने जम्बूसर नाम का प्रयोग किया है. हमें संत कवियों की अन्य रचनाओं में भी जैन सम्बन्धी खोज करनी चाहिए.

जम्बूसर प्रसंग वर्णन

दूहा

शील व्रत की का कहू, महिमा कही न जाइ ।
ज्यूं गजराज के संग तें, अनल न परहीं आइ ।।१।।†
ब्रह्मा विष्णु महेश लौं, करै शील की सेव ।
शील पूज्य तिहुं लोक में, कोई लहै शील का भेव ।।२।।†
भेव लहै सो यह[1] लहै, जंबूसर ज्यूं जानि ।
सिष ताको प्रसंग अब, कहूं स निहचै मानि ।।३।।

---

१. यूं गहै.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चौपाई

शील व्रत सब ही को टीको । शील विना सब लागै फीको ।
'तुरसी' जो मुख सुन्दर होइ । नासा विना न सोभै सोइ ।।४।।†

नासा विना न शोभ हो, सुन्दर नर को मुख ।
'तुरसी' शील धर्म विन, सब ही धर्म निरुख ।।५।।

दूहा

एकादशी जू आदि दे, यावतेषु व्रत सार ।
'तुरसी' ता सब हीन में, शील सुव्रत अधिकार ।।६।†
'तुरसी' शील सुधर्म की, महिमा वर्ण न जाई ।
ताहि जप तप यज्ञ व्रत, रहे सकल सिर नाइ ।।७।।†

कथा प्रसंग : कवित्त

एक साह[२] धनवंत, तास के पुत्र बी जोइ ।
'जम्बूसर' तस[३] नाम, शीलधर जनमत होइ ।।
पिता कियो हठ बहुत[४], परणिवो आरे कीन्हों[५] ।
परण तजूं करि नारि, आप उत्तर यूं दीन्हो[६] ।।
इक[७] वणिया के धीह आठ, तिन्है सुनि मतो विचारै ।
करै पिता सुं अरज, पुरुष, 'जम्बूसर' म्हारै ।।८।।†
मानुं कलजुग भयो, सुणत, यह लागी खारी ।
कन्या कही धर्म बात, तात तब जानि विचारी ।
दिया ताहि नालेर, परणिवा चलि कर आयो ।
'जम्बूसर' ताहि परण, हाथ ताको छिटकायो ।।
बणिये दियो द्रव्य बहुत, तास[९] कूं धरे न आरे ।
विषै डंड यूं जान, आप निज ज्ञान विचारे ।।९।।
चले वहाँ तें आप, आइ बैठे निज भवना ।
तब त्रिया मतौ विचार, कियो ताके ढिग गवना ।।
जम्बूसर बैठे जहां, सुमरै त्रिभुवन तात ।
आठों ही कर जोर करि, पूछन लागी बात ।।१०।।
जम्बूसर व्रत सील धर, भजै राम निज एक ।
त्रीया तोलै तास मन, भाषै प्रसंग विवेक[१०] ।।११
सो प्रसंग अब कहत हूं, प्रथम त्रिया उवाच ।
यामै संसौ नांहि कछु, परगट जानों साच ।।१२।।

प्रथम त्रियावचन—

त्रिया करत यह वीनती, कांम अप्रबल जान ।
आगे जाती होइगी, मारू ढोर समान ।।१३।।

---

२. महा ३. तिस. ४. वहौत. ५. कानौ. ६. दीनौ. ७. एक. ८. धी. ९. ताहि. १०. अनेक.
† चिह्नांकित पद्य दूसरी प्रति में नहीं हैं.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मारूठोर—

सोरठा

थलियां गोहूं बाई,[11] मूरख खोयो[12] अकल बिन ।
कियौ बाजरौ ख्वार, 'मारूठोर' यूं जानिये ।।१४।।

जंबूसर वचन सोरठा—

ताजितखानें[13] भूलि, दुखी रह्यो दिन तीन लग
छूटा पीछे भूलि, बहुरि[14] न कबहु जाइ है ।।१५।।

त्रियावचन सोरठा—

न्हाइ नदी की सोइ, मरकट तें माणस हुवौ ।
बहुरयो[15] मरकट, होइ, कियो ज लालच देव पद ।।१६।।

जंबूसर के वचन—

कोई सहारा नाइ, जग समदर में डूबता ।
रह्यो गृहे उरझाइ, खोवर[16] कागज करककौ ।।१७।।

त्रियावचन—

भज्यौ न पूरण राम, गृह कौ सुख सो भी तज्यो ।
जा कौ ठौरन राम, बुगली ज्यों लटकता रह्यो ।।१८।।

जंबूसर वचन—

इन्द्रचां का सुख नास, या संगि नासत राम पद ।
रेलो चाटत ग्रास, खोयो मूरिख पाहुणै ।।१९।।

त्रियावचन—

नरपति सुत इक जान, चल्यौ ज चन्दन पानकुं ।
आगें हुई ज हान, डेरौ खोयो गांठ को ।।२०।।

जम्बूसरवचन—

जगत सुख लोह आहि, तहि गहै अज्ञान नर ।
मूरख बोझ जनाहि, तजी कुदाली कनक की ।।२१।।
दीन्हो परसन सार,[17] सब कै मन आनन्द भयौ ।
कीन्हो गाढ विचार, 'जंबूसर' सुं पुनि कहै ।।२२।।

त्रियावचन—

दूहा

जंबूसर सूँ जोरि कर, त्रीया करत प्रणाम ।
पुत्र भए सब त्यागिए, सुजस बढै रहै नाम ।।२३।।

जंबूसर वचन—

नामहेत सब जग पचै, तामें नहीं विचार ।
भक्ति छाड भ्रम सूं लग्या, बूडा कालीधार ।।२४।।†

---

११. बाड़. १२. बोयो. १३. तारतखाने. १४. तहां. १५. बोह्यो सु. १६. सो नहिं. १७. सुनिप्रसंग सार.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नांव-नांव बिन ना रहै, सुणौ सकल तुम जोइ।
एक प्रसंग अद्भुत अति, कह समझाजं तोइ ॥२५॥

१८ नाता प्रसंग—

बहन व्याहमाता धरी, माता जायौ जाम।
तीनों तज वन कूं गया (तब) रह्यो कोंण को नाम ॥२६॥
अष्टादश,[१८] नाता भया, ए तीनों का हेतु।
सो प्रसंग अब कहत हूं, सुणजो होइ सचेत ॥२७॥

चौपई

एक नगर में वेश्या ताकै, सुत कन्या संगि जनमें जाकै।
ताकौ तुरत ही नांव कढायो, **सुलतां** कुमेर नांव सो पायौ ॥२८॥
खोटैं नखतर जन्मे भाई, ताहि नदी में दिये बहाई।
कोई नगर तल निकसे जाई, एक महाजन लीए कढाई ॥२९॥

वाकै पुत्र न होता एका, यो हरि दीनौं लियौ विवेका।
लड़कौ ले संग जरौ बाह्यौ, लड़की सहित दरवाजै आयो ॥३०॥
देखि पींजरो ओर ही वणीये, लड़की काढ लई हैं जनिये।
दोउ बडे भये दोऊ स्याना, ताकौ व्याह भयौ परमानां ॥३१॥

साहूकार कोडीधज दोऊ, जोड़ो सोधे मिल न कोऊ।
याके लेख लिख्यौ है भाई, ल्यो नालेर रु करो सगाई ॥३२॥
ढोल नगारा मंगल गाजै, हीरा मोती तन पर साजै।
बणियैं जान बणाई भारी, आप ऊतरी वाग में सारी ॥३३॥

अरध रात समूहरत होई, करता की गति लखै न कोई।
साहूकार मिले हैं सारा, भवन मांहि तब किया उतारा ॥३४॥

चंवरयाँ माहिं बैठा जबही, **सुलता**, देखी मुद्रिका तबही।
तामें अंक लिखे कहे हेरि, बहन'र भाई **सुलतां** कुमेर ॥३५॥
सुलतां अंक विचार जु देखा, ताकौ पाछे कियो विवेका।
भाई बहन विहाये आन, **सुलतां** तज्यो हथलेवो जान ॥३६॥

ह्वै भयभीत कीयौ गृहत्याग, वन वन विचरै ले वैराग।
पूरव पाप कौन में कियो, वीर बहन घर वासों दीयौ ॥३७॥
संत विवेकी बूझत[१९] डोलै, सुनि सुनि वचन सबन का तोलै।
पीछे कुबेर भी कीधो गवना, हेरत आयो वेश्या के भवना ॥३८॥

सो वेश्या ताकी महतारी, वाकै रह्यौ कर घर की नारी।
वाकै पेट कौ इक सुत भयो, सुलतां सुं साधां यूं कह्यौ ॥३९॥
सुलतां चली वहाँ से जबही, वेसां के घर आई तबही।
जब वेश्या सुं वचन उचारै, अष्टादश नाता विस्तारै ॥४०॥

---

१८. कठां जरौ वुहापो. १९. पूछत.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अठारै नातां कौ ब्यौरो

सुलतां वाच—कवित

नगर नाइका[1] आदि, दूसरी माता मेरी ।[2]
तुम सुत की मैं नारि, प्रगट तूं सासू[3] मेरी ।।
मम खांवंद घर नारि, सौक[4] तू सदा हमारी ।
तुम्हैं तात की सूता, तोहि दादी[5] में धारी ।
मम भाई की जोय, लगै तूं भावज[6] मेरे ।
एते लछ तुझ मांहि, कन्या ऐसी विध टेरे ।।
षट नाता षट विध भए, मानूं धर्म दियौ खोइ ।
ज्ञान भगति वैराग ल्यों, जब भ्रम साबतौ होइ ।।४१।।

दूहा

सुलतां के यह वचन सुनि, पूछन लागौ कुमेर ।
कहौ तें कहियौ कहा, सो अब भाखौ फेर ।।४२।।

सुलतां वाच—कवित्त

वेश्या द्वारे वास, कहुं तोहि भड़वौ[1] भाई[2] ।
बाप[3] कहूँ मैं तोहि, तुम्हें घर मेरी माई ।।
खांवंद[4] प्रगट मोर, पलै में बंधी तेरै ।
सासू कौ भरतार, सदा सुसरौ[5] है मेरै ।।
मम दादी कौ खसम, तास विध दादौ[6] कहीए ।
ए साचौ अपराध, तज्यां विन सुख नहिं लहियै ।।
भगति विना भागै नहीं, ये षट पाप अघोर ।
अरक विना क्यूँ नास ह्वै, रजनी तम कौ जोर ।।४३।।

सोरठा

इह सुण वचन कुमेर, वज्र मारयो सो ह्वै गयो ।
सुलतां भाषै फेर, नानड़ीया कूं लाडवै ।। ४४।।

कवित्त

शिशु भाइ[1] समभाई, वीर[2] मम माता जायौ ।
फुनि भाई कौ बीज, भतीजौ[3] तासूं गायौ ।
जानि सौक कौ पूत, सोई साकूत[4] विचारौ ।
मम खांवंद को वीर, सही देवर[5] है म्हारै ।
दादी सुत काकौ[6] कहूँ, कैसी विधि तोहि लाडीए ।
ऐसो ज्ञान विचार कै, संग तुम्हारो छाडीए ।।४५।।

सोरठा

गणिका अरु कुमेर, कहै हम कैसें निसतरैं ।
सुलतां कहें यूं टेर, त्याग करौ रामैं भजौ ।।४६।।

दोहा

जंबूसर बुधिवान अति, दीयौ भारज्या ज्ञान ।
तिरीया मन आनंद बढ्यौ, गयो सकल अज्ञान ।।४३।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रियावाच—

सोरठा

जंबूसर बड़भाग, धनि तेरे माता पिता।
जन्मत ही जग त्याग, छाड लग्यो पर ब्रह्म सुं ॥४८॥
द्रव्य लैण कुं चोर, बांधी पोटज परीति करि।
ज्ञान भयौ तिहि ठौर, जंबूसर कौ ज्ञान सुणि ॥४९॥
अष्ट नारि इह ज्ञान, सुणत ही सांसो सब गयौ।
चोर भयो गलतान, शीलवान का शब्द सुनि ॥५०॥
सुणत त्रास ज्यूं नरक की, मन में उपजी एह।
शील न कबहू त्यागिए, भावे जावो देह ॥५१॥

दोहा

भाग विना पावै नहीं, सील पदारथ सोइ।
जो त्यागे या सीलकुं, तो नरक प्रापति होइ ॥५२॥

कुण्डलिया

जो कोई त्यागै सील कुं, सो पावै नरक अघोर।
अपकीरति होइ जगत में, भक्ति मांहि नहिं ठौर।
भगत मांहि नहिं ठौर, और कहा कहीए भाई।
लहै विपति भरपूर, नूर मुख चढै न कोई।
देवा सदा फिरि तासकुं, जम मारै करि जोर॥
जो कोई त्यागै सीलकुं सो पावै नरक अघोर ॥५३॥

॥ इति जंबूसर कौ प्रसंग संपूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org